ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO. 154-156
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-6, Issues-7 YEAR- 2016 (Extra)

गया जिला में औषधीय पौधों की कृषि - एक भौगोलिक अध्ययन

रंजना कुमारी

एम० ए०, पी० एच० डी०, भूगोल विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया (बिहार), भारत

सारांश : ***वर्तमान गया जिला पुराना गया जिला (वर्तमान में मगध प्रमण्डल) का मध्य दक्षिणी आवशिष्ट भाग है। यह क्षेत्र प्राचीन मगध साम्राज्य का एक भाग है जिसका इतिहास गया जिला का भी इतिहास है। भौतिक दृष्टिी कोण से मोटे तौर पर इसे दो भागों में बाटा गया है। दक्षिणी भाग उबड़–खाबड़ पहाड़ी भाग है, जो लम्बी पहाड़ी श्रृँखला से मिल जाती है जिसकी लम्बी तली में झाड़ीनुमा जंगल पाये जाते है। इसका अधिकांश भाग उबड़–खाबड़ तथा .षि के लिए अनुपयुक्त है। इसकी मिट्टी पर बहुत कम फसले लगायी जाती है, तथा कॉप मिट्टी के विस्तृत जमाव रुपी समुद्री भाग में पहाड़ीयाँ द्वीप की तरह दिखती है। जिला का उत्तरी भाग अत्यन्त उपजाउ तथा विस्तृत सिचाई का क्षेत्र है। मॉनसूनी जलवायु के कारण घनी खेती नहरों, पाइन तथा ट्यूब वेल्स की सहायता से की जाती है।***

गया जिला के पश्चिम में औरंगाबाद जिला तथा दक्षिण में चतरा एवं पलामू (झारखण्ड राज्य) पूर्व में नवादा तथा उत्तर में नालंदा स्थित है। इसका क्षेत्रफल 496 वर्ग कि० मी० है। गया जिला के अन्तर्गत तीन अनुमण्डल आते है– गया सदर, शेरघाटी एवं टिकारी है।

वैज्ञानिक खेती में किसानों की आमदनी बढ़ाने वाले फसलों तथा तकनिकों को बढ़ावा देने का कार्य क्रम शामिल किया गया है। औषधिय पौधों की खेती को अपनाकर किसान अपनी आमदनी को बढ़ा सकते है। इन पौधों की खेती अपेक्षाकृत कम उपजाउ जमीन पर भी कि जा सकती है। ये पौधे मानव स्वास्थय तथा पर्यावरण संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण है। औषधी फसलों अन्य फसलों की तुलना में बेकार, बंजर, कृषि के अनुपयुक्त भूमि तथा मौसम में भी किसानो के लिए लाभदायक है।

राज्य सरकार औषधीय पौधें की खेती को बढ़ावा देने के लिए किसानों को इन फसलों की खेती के लिए आर्थिक सहायता प्रदान कर रही है। खेती के साथ–साथ प्रसंस्करण के लिए भी अनुदान का प्रावधान किया गया है। ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार एवं आधिक आय के अवसर औषधीय खेती से प्राप्त हो रहा है। गया शहर के नजदीक तुलसी की खे से दो मुख्य फसलों के बीच 70–80 दिनों में काफी अच्छी आय किसानों द्वारा की जा रही है।

औषधीय गुणों वाले नागर मोथा की खेती – औषधीय जगत में नागरमोथा का उपयोग बहुलता से होता आया है जो अब और बढ़ गया है। नागरमोथा साइप्रेसी कुल का पौधा है, इसकी 60 प्रजातियाँ पाई जाती है। इसकी खेती इसलिए भी फायदेमंद है क्योंकि इससे दवाइयां बनाई जाती हैं। इसके अलावा इसमें पाई जाने वाली तौक्ष्ण सुगंध के कारण यह साबुन, परयूम, अगरबती आदि बनाने के भी काम आता है।

नागर मोथा अक्सर नमीयुक्त स्थानों दलदली भूमि तथा नदी–नाले के किनारे अत्याधिक मात्रा में पाया जाता है। नागरमोथा घास के समान पौधा होता है जो बेलनाकार, पतला तथा 40–60 से. मी. तक लंबा होता है। अनुपजाऊ तथा बंजर भूमि में इसकी खेती आसानी से की जा सकती है।

औषधीय गुण एवं उधोग– अधिकांशतः इसका उपयोग आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सा में किया जाता है। इसकी जड़ों में दुग्श्रावण बढ़ाने की क्षमता होती है। इसके आलावा यह दर्द निवारक व ज्वरनाशक भी होता है। इसक उपयोग अतिसार, थाकान, जलन, मुख का कड़वापन दूर करने में, ज्वर में, गला सूखने पर, बवासीर तथा फोडें–फुन्सी आदि में किया जाता है। इसके साथ–साथ साबुन, धूप, अगरबती, शेम्पू, हवन समाग्री आदि में तथा पतियों की चटाई–टोकरी आदि जैसे सजावट के समान बनाने में भी इसका उपयोग किया जाता है। इसके अन्य उपयोगों पर भी अनुसंधान किया जा रहा है। इसमें तेल द्रव्य 0.75–0.80 प्रतिशत तक पाया जाता है।

रोपाई– जून से जुलाई माह में इसकी जड़ों को जो कि समूह में पाई जाती है, अलग–अलग करके 15 15 से. मी. की दूरी पर लगा देते है। लगाने के बाद सिंचाई करते है।

जडों को निकालना– नागर मोथा की फसल जब सत्रह अठारह माह की हो जाती है तब इसकी जड़ों से अर्क निकाला जा सकता है। इसके लिए पत्तियां जब चमक खोने लगें तो भूमि से जड़ों को खोदकर निकाजा जाता है। फिर इनको अच्छी तरह साफ कर मिट्टी रहित कर हल्की धूप में सुखा लिया जाता है। इसकी पत्तियों का विदोहन कर हम अतिरिक्त आय

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-6, Issues-7 YEAR- 2016 (Extra)

प्राप्त कर सकते है।

जड़ो का आसवन– नागरमोथा की जड़ों को आसवित कर तेल निकाला जाता है। कन्नौज में इसकी बहुत सी आसवन इकाइयां है।

आर्थिक लाभ– बाजार में नागरमोथा 800 से 1000 रुपये प्रति क्विंटल की दर से बिकता है।

औषधीय पौधे कलिहारी की खेती– कलिहारी लिलिएसी कुल का पौधा है। यह शोथ, कठमाल, गठिया एवं वात, वेदना, कुष्ट व अर्श में, टॉनिक के रुप में मूढ–गर्भपातन में भी उपयोगी है। यह जटिल प्रसव को आसान बना देने एवं गर्भपात अथवा प्रसव के उपरांत पेट में बचे आंवल एवं मांस के टुकड़ों को आसानी से बाहर निकाल देने की क्षमता भी रखती है।

खेती के लिए जलवायु– यह जून –जुलाई से अक्टुबर–नवम्बर तक वर्षाकाल में होने वाली वनस्पति है और इसके लिए उष्ण तथा नम जलवायु उपयुक्त होती है।

भूमि – इसकी खेती के लिए 6–7 पीएच मान वाली बलुई दोमट मिट्टी अच्छी होती है किन्तु इसकी खेती अच्छी जल निकासी वाली प्रत्येक प्रकार की मिट्टी – पथरीली, कंकड़ीली भूमि में भी की जा सकती है।

खेत की तैयारी – इसकी खेती के लिए ग्रीष्म ऋतु में गहरी जुताई करके 60–60 से. मी. पर मेड़ियां वा नालियां बनाकर मेड़ियों में कंदों के रोपित करके बिजाई की जाती है।

फसल की बुआई – वैसे तो कलिहारी के पौधे बीजों को नर्सरी में बोकर भी तैयार करके रोपित किये जा सकते है। परन्तु ऐस करने से पहले वर्ष में केवल कंद ही तैयार हो पाते है। तथा इन पर फूल तथा बीज नही आ पातें परंतु यदि इनकी बिजाई ऐसे कंदों से की जाती है जिनका वजन 50–60 ग्राम हो तो उनके रोपण वर्ष से ही फल व बीज प्राप्त किये जा सकते है। अतः जहां बीज से फसल तैयार करनी हो, वहां इसे नर्सरी में 4–6 इंच की दूरी पर वर्षा प्रारंभ होते ही बो देना चाहिए एवं एक वर्ष इसी नर्सरी में पड़े रहने देना चाहिए। दूसरे वर्ष, इन कंदों को खेद कर उन्हें 0.1 प्रतिशत फफुंद नाशी धोल से उपाचारित कर वर्षा ऋतु में मेड़ियों में 60 से.मी. कतार से कतार वा 45 से.मी. कंद से कंद की दूरी रख कर 6–9 इंच गहरा लगा देना चाहिए। औसतन एक हेक्टेयर में 41500 कंद की जरुरत होती है।

फसल की तुड़ाई – 170–180 दिनों के बाद अधपके फल, जो हल्के हरे–पीले रंग के हो जाते है, को तोड़कर छाया में 10–15 दिन तक सुखाना चाहिए एवं फलों से बीज अलग कर अच्छी तरह से सुख लेना चहिए। छिलका एवं बीज दोनों ही उपयोग होते है। अतः इन्हें अलग–अलग संग्रहित करना चाहिए। जब अंत में कंदों को उखाड़ा जाय (5–6 साल की फसल के बाद) तो इन्हें सुखाने के पूर्व धेकर छोटे–मोटे टुकड़े करके ठीक से सुखाना चाहिए। इन्हें सुखाने में करीब 2 माह लग जाते है। अच्छज्ञ हो यदि इन्हें खेत में ही लगा रहने दें तथा जब वे जुलाई में प्रस्फुटित होन लगें तो उन्हें सावध ाानी से खोदकर नये स्थान पर लगा दें।

पैदावार – कलिहारी की खेती से प्रति हेक्टेयर 250–300 किलो बीज, 150–200 किलो छिलके एवं पांचवें वर्ष में 2.5–3 टन सूखे कंद प्राप्त होते हैं। यह एक बहुवर्षीय फसल है अतः एक बार रोपित कंदों से 5 वर्ष तक बीजों का उत्पादन लिया जा सकता है एवं अंतिम वर्ष में कंद भी खोद लेना चाहिए।

आय–व्यय – कलिहारी की खेती में 5 वर्षो में करीब 1.: लाख रुपये के लागत आती हैं तथा 5 वर्षो में 6–7 लाख आमदनी होती है। (बीज एवं विपणन हेतु निम्नलिखित पते पर संपर्क करें – सृष्टि फाउण्डेशन, सी–18, श्री.ष्णापुरी, पटना–1)

धृतकुमारी (एलोवेरा) की खेती – धृतकुमारी का उपयोग चर्मरोग, दात के हिलने एवं दर्द, चोट लगने पर, कफ, खांसी, बवासीर, कब्ज तथा सौंदर्य प्रसाधन में किया जाता है।

खेती के लिए भूमि– यथपि धृतकुमारी की खेती असिंचित तथा सिंचित दोनों तरह की भूमि पर की जा सकती है, परंतु इसकी खेती सदैव असिंचित जमीन पर ही की जानी चाहिए। पिस जमीन पर इसकी खेती करनी हो वहां पानी भरा नही रहना चाहिए तथा पानी के निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

रोपण– धृतकुमारी की बिजाई इसके कंद से की जाती है। इसके छोटे पौधों का रोपण वर्षाकाल अर्थात् जुलाई–अगस्त माह में किया जाता है। इसके इसके लिए पुराने पौधों की जड़ों के पास से ही कुछ छोटे पौधे की जड़ों के पास से ही कुछ छोटे पौधे की निकलने लगते हैं। वर्षाकाल में इन्ही छोटे पौधों को जड़ सहित निकालकर बड़े खेत में लगा दिया

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-6, Issues-7 YEAR- 2016 (Extra)

जाता है।

पौधों की संख्या प्रति एकड़– एक मीटर में इसकी दो लाइनें लगाकर तथा फिर एक मीटर जगह खाली छोड़कर पुनः एक मीटर में दो लाइनें लगानी चाहिए। इस प्रकार एक एकड़ में धृतकुमारी के 14.000 तक पौधे लगाए जा सकते हैं। प्रत्येक खंड के बाद एक मीटर जगह खरपतवार निकालने तथा पत्तियों को काटने के लिए
रखते हैं।

खर –पतवार नियंत्रण– प्रत्येक माह में धृतकुमारी के अतिरिक्त छोटे–छोटे अवांछित पौधों को निकालते रहना चाहिए।

कुल उत्पादन– एक वर्ष में प्रति एकड़ 20,000 किलो ताजा पत्ते प्राप्त होते हैं। वर्तमान दर 3 रु. प्रति किलो की दर से 60.000 रु. प्रतिवर्ष आमदनी होती है।

उपयोग – यह पेप्टिक अल्सर कब्ज को ठीक करता है। सौन्दर्य प्रसाधन में इसका उपयोग गोरापन बढाने में होता है। बाल के विकास में भी यह
लाभदायक है।

निष्कर्ष – गया जिला में लगातार तीव्रगति से बढ़ती हुयी जनसंख्या के मकेनजर उपरोक्त परम्परागत कृषि उत्पादन ही प्रर्याप्त नहीं है। भूमि पर जनसंख्या दबाव बढ़तें जाने से किसान गरीब होते चले जा रहे हैं। .षि–मजदूर तथा बेरोजगारी की संख्या में वृद्धि होती जा रही है। गरीबी में पिसते लोग कोई सहाना न होने के कारण उग्रवाद के दलदल में फंसते जा रहे हैं। बढ़ते उग्रवाद का प्रधान कारण निर्धनता तथा बेरोजगारी मानी गयी है।

जिला में बढ़ते उग्रवाद को रोकने तथा आम जनता में सुख, शान्ति, समृद्धि को प्रश्रय देने के लिये कृषि में विविध ाता लाने तथा अधिक लाभयुक्त औषधीय पौधों कोलगाने पर बल देना चाहिए। जिला की मिट्टी तथा जलवायु उसके उत्पादन के अनुकूल है। इन नये फसलों के उत्पादन की यहाँ प्रर्याप्त संभावनाएँ हैं। नवीन .षि उत्पादनों में इंद्रायण (एक औषधीय लता) की खेत, हल्दी, निर्गुण्डी, एलोबरा, कचनार, कटेरी तथा फूलों की खेती का भी नाम आता है। जिले के विभिन्न भागों की उपयुक्त मिट्टी पर इन सबों की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। सरकार की ओर से भी इनके उत्पादन पर प्रोत्साहन दिया
जा रहा है।

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. चौधरी, पी० सी० राय, बिहार डिस्ट्रीक्ट गजेटियर्स–गया, भू चिन्तन, जून 2009, 1957, पटना सेक्रटेरियट प्रेस, पृ० 1–2.
2. मनोरमा इयरबुक, 2002, (कोटमय, मलय मनोरमा), पृ० 639.
3. छास विशेश्वर, सिंह राकेश बहादुर, मिश्रा जिय कुमार, बिहारः एक परिचय, 2008, पटना, जेनरल बुक एजेन्सी. पृ० 502–03.
4. संदर्भ 1, पृ० 1.
5. पण्डित, बादू एवं गुप्ता, अनिल कुमार, बिहार का भौगोलिक अध्ययन, 2005, आगरा, साहित्य भवन पब्लिकेशनस, पृ० 57.
6. वही.
7. ठाकुर, अशोक कुमार, दैनिक जागरण 5.12.2007, पृ० 14.
8. ठाकुर, अशोक कुमार, कृषि विशेषज्ञ, दैनिक जागरण, पृ० 14.

*****